टूटता समाजवाद बिखरता सोवियत संघ

हिन्दुस्तान
22.4.1991

मार्च के अंतिम सप्ताह में सोवियत संघ के एक लाख से भी ज्यादा कोयला खान मजदूरों ने राष्ट्रपति मिखाइल गोर्बाचेव द्वारा कड़ी पाबंदी लगाये जाने के बावजूद हड़ताल कर दी और प्रदर्शन पर उतर आये। श्री गोर्बाचेव और कठोर नीतियों के उनके प्रधानमंत्री वैलेन्तीन पाव्लोव उसके पहले कड़ी-से-कड़ी कार्रवाई की चेतावनी दे चुके थे, लेकिन तब भी उत्तेजित प्रदर्शनकारियों ने राष्ट्रपति निवास को चारों ओर से घेर लिया। उस प्रदर्शन को विफल करने के लिए तैनात पुलिस और सेना के ५० हजार जवानों को अपने राष्ट्रपति के निर्देश पर पीछे हटना पड़ा। श्री गोर्बाचेव ने प्रधानमंत्री को अपना प्रतिनिधि बनाकर मजदूरों से बातचीत करने भेजा, लेकिन प्रदर्शन के आयोजक निकोलाई त्रैवकिन का जवाब मिला- 'बातचीत के जरिये कोई मामला सुलझाने का समय अब जाता रहा। मजदूरों को सिर्फ गोर्बाचेव और उनकी संसद का इस्तीफा चाहिए, बाकी का निदान वे खुद ढूंढ लेंगे।' उप-प्रधानमंत्री ब्लादीमिर शेर्बाकोव हाथ जोड़कर यह कहने आये कि 'मुझे उम्मीद है कि हमारी जनता देश की परिस्थिति समझेगी, क्योंकि कोयले की कमी से इस्पात कारखाने बंद हो जायेंगे और उससे होने वाले नुकसान पूरे करने में कई वर्ष लग जायेंगे।' लेकिन, मजदूर नेता एनातोली मेलिखिन ने उन्हें यों दुत्कारा- 'गोर्बाचेव एक राजनीतिक लाश मात्र हैं और हम भय तथा उत्पीड़न की आशंका से काफी ऊपर उठ चुके हैं। अगर वो चाहते हैं कि स्थिति अनुकूल हो तो संसद भंग करके इस्तीफा दें और सत्ता १५ गणतंत्रों के शासकों के हाथ में सौंप दें।'

सोवियत संघ के इतिहास की यह पहली घटना है, जब इतने सारे मजदूरों ने एक साथ मिलकर सरकारी पाबंदी का उल्लंघन करके खुलेआम प्रदर्शन किया और वही सेना उन्हें आगे बढ़ने से रोक नहीं पायी, जो जोसेफ स्टालिन के जमाने में होंठों पर जीभ फिराते ही बिता भर बाहर निकाल देती थी। कीमतों में वृद्धि, राजनीतिक और आर्थिक अस्त-व्यस्तता तथा सरकारी स्वामित्व के विरोध में समाजवादी व्यवस्था का सिरमौर कहलाने वाले इस देश की यह पहली सफल राजनीतिक हड़ताल है, जिसके आगे सरकार की कुछ अक-बक नहीं चल पा रही है। दो साल पहले भी कोयला मजदूरों ने काम बंद कर दिया था, लेकिन श्री गोर्बाचेव ने कूटनीतिक दावपेंच खींचकर उन्हें पटा लिया था, लेकिन अभी वाकई स्थिति अत्यन्त गंभीर है।

उदार समाजवादी विचारधारा के प्रणेता मिखाइल गोर्बाचेव ने समूचे पूर्वी यूरोप में परिवर्तन की नयी लहर चलाकर जहां एक नये युग की सूत्रपात की, वहीं अपने देश में वे स्वयं ही अपनी नीतियों के जाल में ऐसे फंस गये हैं कि जब तक उसमें से निकलने का उपाय कारगर होगा, तब तक सोवियत संघ टूटकर बिखर चुका होगा और शायद उनके पास खड़े होने के लिए जमीन तक न हो। जिस उदारवादी हवा को श्री गोर्बाचेव ने गति दी उसने आज के माहौल के अनुकूल (जब हर व्यक्ति अपना स्वतंत्र अस्तित्व चाहता है) उन लोगों को खुलेपन का ऐहसास दिलाया, जो दमन और घुटन की जिन्दगी से ऊबकर जीते-जी अधमरे हो गये थे, लेकिन सोवियत संघ के लोग अपने कालजयी राष्ट्रपति की क्रांतिकारी पेशकश का लगता है कुछ जरूरत से ज्यादा ही उत्साह से इस्तेमाल करने पर उतारू हैं जिसका सबसे दुखद परिणाम यह हुआ है कि एक महाशक्ति की एकता और अखंडता पर खतरा पैदा हो गया है तथा क्षेत्रीय स्वायत्तता की मांग की धुन में सोवियत गणतंत्रों के नेता मजबूर और विशाल राष्ट्र की जरूरत को नजरअंदाज करने की भारी भूल कर रहे हैं।

अप्रैल के प्रथम सप्ताह में जॉर्जिया ने आजादी की घोषणा कर दी। यह उसी स्टालिन का गृह गणतंत्र है जिसने बुलेट के बल पर कायम अपनी खौफनाक नीतियों की बदौलत जारकालीन रूसी साम्राज्य का विस्तार किया था। इससे पहले तीनों बाल्टिक गणतंत्र- लिथुआनिया, लातविया और एस्तोनिया आजादी की घोषणा कर चुके हैं और मौजूदा संघ के पक्ष में हुए जनमत संग्रह के बावजूद वहां स्वतंत्रता का ज्वार थमा नहीं है, लेकिन बाल्टिक गणतंत्रों की तुलना में जॉर्जिया का हिसाब-किताब अलग है। स्टालिन ने १९३९ में हिटलर के साथ एक गुप्त संधि करके तीनों बाल्टिक गणतंत्रों का रूस में विलय कर लिया था, लेकिन जॉर्जिया जारशाही के जमाने में भी रूसी साम्राज्य का हिस्सा था। १९१७ की बोल्शेविक क्रांति के बाद जब अल्पसंख्यकों को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया गया, तो जॉर्जिया ने मार्च, १९१८ में अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी। १९२२ तक जॉर्जिया एक स्वतंत्र मगर धुरी से उखड़ा हुआ देश रहा। जब उसने लेनिन के नेतृत्व में सोवियत संघ का हिस्सा बनना स्वीकार किया तब यह उसका अपना-अपना फैसला था। १९२२ से लेकर गोर्बाचेव के उदय तक जॉर्जिया ने कभी ऐसा संकेत नहीं दिया जिससे यह लगा हो कि वह अपनी स्वतंत्र अस्मिता की रक्षा के लिए बेचैन है। यह सोचने की बात है कि अगर गोर्बाचेव उप-राष्ट्रीयता को प्रेरित न करते तो अलग संस्कृति वाले गणतंत्र जॉर्जिया में क्या वाकई अपनी पहचान बनाने की मुहिम शुरू होती?

बहरहाल जॉर्जिया की घोषणा सोवियत संघ के लिए अनिष्ट का सूचक है और स्थिति विस्फोटक रूप ले चुकी है, क्योंकि उसके साथ ही मोल्डाविया और आर्मीनिया ने भी आजादी की घोषणा कर दी है जिन्होंने १७ मार्च के राष्ट्रीय जनमत संग्रह का बहिष्कार किया था। यों इस जनमत संग्रह से गोर्बाचेव को देश की एकता और अखंडता बनाये रखने का जनादेश मिल चुका है, लेकिन जब सबसे बड़ा गणतंत्र रूस ही अनमना हो तो इस जनमत संग्रह की भी क्या बिसात? लेकिन, इसका तात्पर्य यह भी नहीं कि इन गणतंत्रों को इतनी आसानी से सोवियत संघ से अलग होने की छूट देकर देश को पूरी तरह से बिखर जाने दिया जायेगा, क्योंकि १७ मार्च के जनमत संग्रह ने मिखाइल गोर्बाचेव को यह अधिकार दे दिया है कि साम- दाम- दंड- भेद से वे देश को एक बनाये रखें, लेकिन गोर्बाचेव चाहते हैं कि शक्ति का कम-से-कम उपयोग किया जाये, क्योंकि अभी उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती है बोरिस येल्तिसन, जिनकी तेजी से बढ़ती लोकप्रियता ने भावी सोवियत नेतृत्व के आगे प्रश्नचिन्ह लगा दिया गया है। देश को जोड़कर मजबूत बनाये रखने के लिए गोर्बाचेव ज्योंही शक्ति का सहारा लेते हैं कि बोरिस येल्तिसन को जनता की सहानुभूति पाने का अवसर मिल जाता है और उनका प्रभाव लगातार बढ़ता चला जाता है। फिलहाल उनका सबसे ज्यादा दबदबा बाल्टिक प्रांतों पर है, जिसके आर्मीनिया (जो कि आजादी की घोषणा करने वाले गणतंत्रों में सबसे बड़ा है) ने स्वतंत्र रूप से जर्मनी, अमरीका और अन्य देशों से राजनयिक तथा व्यापारिक संबंध स्थापित करने का ऐलान कर दिया है। गत सप्ताह आर्मीनिया मंत्रिमंडल की एक बैठक में निर्णय लिया गया कि यह देश संयुक्त राष्ट्र में अपना प्रतिनिधि रखने का अधिकार रखता है और इसका शासन एकमात्र संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण आयोग के प्रावधानों द्वारा ही नियंत्रित हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह कि आर्मीनिया सोवियत संघ से कोई सम्पर्क रखने के पक्ष में नहीं है।

बोरिस येल्तिसन का मिखाइल गोर्बाचेव से ज्यादा लोकप्रियता हासिल करने का दावा इतना प्रबल साबित हुआ कि इस महीने के प्रथम सप्ताह में संसद की आपातकालीन बैठक बुलानी पड़ गयी और वाकई श्री गोर्बाचेव को भी अचरज हुआ, जब ६०७ डिपुटीज में से २२८ बोरिस येल्तिसन के पक्ष में थे, जिन्होंने केन्द्र में मिली-जुली सरकार और डिकी द्वारा शासन चलाने की मांग की।

लेकिन बोरिस येल्तिसन और सोवियत गणतंत्रों के शासक यह न समझ पाने की भूल कर रहे हैं कि वह श्रेय भी मिखाइल गोर्बाचेव को ही जाता है कि पूरे पूर्वी यूरोप को खुले माहौल में ले जाने वाले के नेतृत्व को उनके अपने ही देश के लोगों ने खुली चुनौती दे दी है। शक्तिशाली सोवियत संघ से अलग होकर वे गणतंत्र कितने स्वतंत्र और स्वायत्त रह सकेंगे, इतिहास के पुराने पृष्ठों से ही यह समझना बेहतर होगा। अमेरिकी और पश्चिमी सहानुभूति का मतलब तभी अच्छी तरह समझ में आयेगा, जब सोवियत संघ का केन्द्रीय नेतृत्व सही में टूटकर बिखर जायेगा और गणतंत्रों को अपनी हर जरूरत के लिए पश्चिम का मोहताज होना पड़ेगा। बोरिस येल्तिसन ऐसा क्या कर लेंगे, जो गोर्बाचेव नहीं कर पा रहे हैं? येल्तिसन ने किस आधार पर यह सोच लिया कि जो गणतंत्र आज मिखाइल गोर्बाचेव की अधीनता स्वीकार करने के पक्ष में नहीं हैं वे कल को उनके साथ हो जायेंगे और रातोंरात वे देश की चरमरायी अर्थ-व्यवस्था ठीक कर लेंगे? इतनी खास्ता आर्थिक हालत सोवियत संघ की पहले कभी नहीं हुई। सरकार के पास महंगाई बढ़ाने के अलावा कोई उपाय नहीं है, जिससे उपभोक्ता परेशान हैं और उपभोक्ताओं के बढ़ते असंतोष से देश की एकता और अखंडता को खतरा है। खान मजदूरों को दुगुनी मजदूरी, बोनस और कुछ कोयला अपने स्तर से बेचने का आश्वासन देकर गोर्बाचेव ने आर्थिक दशा सुधारने के लिए पश्चिम से संबंध सुधारने के अलावा एशिया के अर्थ-सम्राट जापान की ओर भी हाथ फैलाये। जापान समझ रहा था कि सोवियत संघ संबंध सुधारना क्यों चाहता है, इसलिए उसने गोर्बाचेव की टोक्यो यात्रा को कोई महत्व नहीं दिया और अपने तीन उत्तरी द्वीपों को मुक्त करने की मांग में जरा भी मुख्वत नहीं की, जिन पर द्वितीय विश्व युद्ध के समय जापान के आत्मसमर्पण के बाद सोवियत संघ ने कब्जा कर लिया था। इसी सप्ताह गोर्बाचेव टोक्यो पहुंचे (जो किसी सोवियत राष्ट्राध्यक्ष की पहली जापान यात्रा थी), लेकिन वे जापानी प्रस्ताव के मुताबिक तीनों द्वीप एकदम से छोड़ने को तैयार नहीं हुए और जापान भी इस पर अड़ा था कि कोई आर्थिक या व्यापारिक संधि करने से पहले अपना काम बना लिया जाये। परिणाम यह हुआ कि गोर्बाचेव चिंतित मुद्रा में ही लौटे, क्योंकि अभी उन्हें जापान की ज्यादा जरूरत है। सोवियत संघ की ७० लाख जनता भुखमरी की चपेट में है और ८०० लाख लोग गरीबी रेखा से नीचे रह रहे हैं। उपभोक्ता सामानों के लिए लोगों को घंटों लाइन लगानी पड़ती है। खेती-बाड़ी चौपट है और कल-कारखाने एक-एक करके बंद होते जा रहे हैं।

शशिधर खां

